भावना करे भगतु, मिलाए महबूब_ सां,
भावना विझी भरम में, नितु रुआरे रतु,
समुझी ड्रिसु सामी चए, छड्डे मोह ममतु,
गिरहस्ती अऊं विरिखतु, भावना में भासी रहियो.

भावना (विचार, मनसा, कल्पना) की प्रबलता का वर्णन करते हुए सामी साहब कहते हैं कि मनुष्य की भावना ही उसे भक्त बना कर परमेश्वर से मिलाती है। यही भावना अनेकलोगों को भ्रम और संशय आदि ख्यालों में डाल कर दुख देती है और खून के आँसू रुलाती है। इसलिए सामी कहते हैं, हे मनुष्यज! तुम विवेक से विचार कर और मोह-ममता का त्याग करो। भावना तो सभी मनुष्यों में होती ही है, फिर चाहे वह गृहस्थ (घर-बार वाला) हो या बिरक्त (वैरागी) हो। सब भावना में ही भासमान हो रहे हैं।

भावना मन की वृत्ति है। भावना का अर्थ है मानसिक धारणा, कल्पना, विचार या इच्छा। वाल्मीकि के शब्दों में, '**यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी**'। = जिसकी जैसी भावना होगी, वैसी सिद्धि प्राप्त होगी। अपनी-अपनी भावना के अनुसार ही सब को फल की प्राप्ति होती है। '**जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन तैसी।**' हमारी जैसी भावना, कल्पना या दृष्टि होगी, वैसा ही हम देखते और सोचते हैं। भावना शुद्ध होगी तो फल भी शुद्ध और सुष्ठु मिलेगा किन्तु भावना अगर अशुद्ध होगी तो फल भी वैसा ही मिलेगा। भावना के दो प्रकार हैं- (1) लौकिक (2) अलौकिक/ईश्वरीय। **लौकिक** भावना के भी दो भेद हैं- 1. निम्न स्तर की भावना- इसमें सांसारिक भोग भोगने की कामना रहती है। 2. क्षेत्रीया अर्थात् यज्ञ आदि कर परलोक के सुख भोगने की कामना। **ईश्वरीय** भावना में मोक्ष-मुक्ति के लिए ईश्वर का चिंतन किया जाता है। आध्यात्म में भावना शुद्ध होने पर बल दिया जाता है। सच्ची भावना द्वारा ही उस 'सत्य'/ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है। अन्यथा जप, तप, ध्यान, तीर्थस्थानों का पर्यटन आदि सब व्यर्थ है।

भावना के कारण ही मनुष्य अच्छा-बुरा, छोटा-बड़ा, सच्चा-झूठा, ज्ञानी अज्ञानी आदि बनता है। यही भावना मनुष्य को परमेश्वर से भी मिलाने की बात सामीजी कहते हैं। सिंधी के महान संत स्वामी टेऊँ रामजी के शब्दों में-

हे संसारी, चित्त उदारी, भावना तूं करि भली।
करि हुशियारी, बणु विचारी, गैर वारी छड्डि गली॥

■